*Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education*

*Vol. VII, Issue No. XIV, April-2014, ISSN 2230-7540*

**REVIEW ARTICLE**

# सूर रचित भ्रमरगीत की काव्य भाषा और शैली–विज्ञान की शक्तियां और सीमाएं

AN INTERNATIONALLY INDEXED PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL

www.ignited.in

*Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education*
*Vol. VII, Issue No. XIV, April-2014, ISSN 2230-7540*

# सूर रचित भ्रमरगीत की काव्य भाषा और शैली–विज्ञान की शक्तियां और सीमाएं

**Dr. Louis Hauhnar**

Associate Professor, Mizoram Hindi Training College, Durtlang-North, Aizawl, Mizoram-796001

----------X----------

शैली की साहित्यगत अपरिसार्थता स्वीकार करने के बाद यह कहना अतिश्योक्ति नहीं है कि शैली–विज्ञान एक स्वतः पूर्ण ज्ञान विधा है। औचित्य पूर्ण दृष्टि से यह कहना उपयुक्त प्रतीत होता है शैली विज्ञान का साहित्य के अध्ययन में महत्वपूर्ण योगदान संभव है, लेकिन यह कहना अतिव्यप्ति मूलक होगा कि शैली विज्ञान एक नियंत्रक ज्ञान विधा है, अर्थात् साहित्य के अध्ययन में इसी ज्ञान–विधा का पूर्ण वर्चस्व रहता है। यह स्वीकारने से किसी प्रकार की आपत्ति नहीं होनी चाहिये कि शैली वैज्ञानिक प्रविधि के अभाव में साहित्य समीक्षा संभव नहीं है, पर यह कहना भी अतिश्योक्तिपूर्ण होगा कि शैली विज्ञान ही ''साहित्य समीक्षा'' का दूसरा नाम है। इस सम्बन्ध में डॉ0 रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव का यह दृष्टिकोण है कि ''शैली विज्ञान आलोचना की नई भूमिका'' है। भारतीय काव्यशास्त्र में दोष, गुण, अलंकार, शब्द–शक्ति का विवेचन किया गया है। भारतीय लेखकों ने शैली–विज्ञान से सम्बन्धित इन सभी अवधारणाओं का सूक्ष्मता के साथ विवेचन किया है। ''ध्वन्धालोक'', ''व्यक्तिविवेक'' आदि के आधार पर भारतीय शैली विज्ञान का विस्तृत आधार तैयार किया जा सकता है। भारतीय विचाराकों ने भाषा के शैक्षिक पक्ष की अवहेलना नहीं की। उनका दृष्टिाकोण मात्र व्यक्तिपूरक नहीं रहा, वरन् उन्होंनें वस्तुपूरक दृष्टिकोण को भी अपनाया।

साहित्य सम्बन्धी भारतीय विवेचन में यह तथ्य पुष्पलता के साथ निरूपित हुआ है कि साहित्य भी भाषा का एक रूप है। साहित्य मूल रूप से भाषा पर आधारित है। शब्द से ही काव्य निरूपित होता है। भामह, दंडी, मम्मट, पंडितराज जगन्नाथ आदि आचार्यों ने इस तथ्य को निराविल रूप से स्वीकार किया है–

**शब्दार्थौ सहितौ काव्यम्** **–भामह**

**शरीरं तावादिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली –दंडी तददोषो शब्दार्थौ**

**सगुणावर्नलन्ती पुनः क्वापिः** **–ममहाचार्य**

**रमगीण्यातिपादकः शबदः काव्यम्** **–पंडितराज जगन्नाथ**

यहां यह उल्लेखनीय है कि शब्द का प्रयोग सभी आचार्यों ने विस्तृत एवं व्यापक अर्थ में किया है। वस्तुतः शब्द यहां समग्र भाषा के लिये व्यवहुत है। अन्य आचार्यों ने अपने–अपने सिद्धान्तों के निरूपण के लिये विशिष्ट शब्दों को प्रयोग किया है। वक्रोक्ति–सामान्य से भिन्न प्रयोग किया है। कुन्तक की दृष्टि में वक्रोक्ति के द्वारा ही काव्य की सृष्टि संभव है। ''वक्रोक्ति काव्य जीवितम्'' से उनका यही मन्तव्य है।

इसी प्रकार वान ''रीति''–''विशिष्ट पदरचना'' को काव्य की आत्मा मानते हैं –

''रीतिरात्मा काव्यस्य''–''विशिष्टाः पदरचना रीतिः''।

वस्तुतः विशिष्ट पदरचना से उनका अभिप्राय वही है कि काव्य भाषा का ही एक विशिष्ट रूप है।

विश्वनाथ की काव्यविषयक उक्ति –''वाक्यं रसात्मकं काव्यम्'' – ''रसात्मक वाक्य ही काव्य – साहित्य होता है, भी उपर्युक्त मन्तव्य –''साहित्य भाषा का ही एक रूप है, की पुष्टि करता है।

काव्य–भाषा संरचनात्मक दृष्टि से सामान्य भाषा से अलग होती है। इस मान्यता के आधार पर रूसी विद्वान विनोकर ऐसा मानते हैं कि काव्यभाषा विज्ञान की परिधि से बाहर निकल जाती है तथा उससे सम्बद्ध समस्याओं का समाधान भाषाविज्ञान के पास नहीं हेाता। कोझिनोव भी ऐसा मानते हैं कि ''कविता'', भाषा से भिन्न संघटना की मांग करती है।

वस्तुतः विनोकर और कोझिनोव प्रभूति रूसी विज्ञानों की काव्यभाषा के अध्ययन में भाषा विज्ञान की अक्षमता सम्बन्धी धारणाओं में कोई तथ्य नहीं है, क्योंकि भाषा विज्ञान सब प्रकार की भाषाओं के अध्ययन के लिये प्रतिश्रुत है।

उसी प्रकार साहित्य समीक्षा के लिये भाषा विज्ञान आवश्यक है। एक अच्छा समीक्षक अनिवार्यतः एक अच्छा भाषाविद् भी होता है।

**वेलेक** ने अपने उपर्युक्त लेख में एक स्थान पर कहा है कि–

I am one of those students of literature who recognize and emphasize the enormous contribution of linguistics to literary scholarship. Especially in the analysis of matter and especially again in the analysis of the phonemic principle, the contribution of linguistics has been invaluable.

यह स्वीकार्य है कि पहले भाषा वैज्ञानिकों ने कविता के ध्वनि पक्ष एवं छन्दों का ही विश्लेषण किया और उससे सम्बन्धित अध्ययन को वैज्ञानिकता प्रदान की, पर

www.ignited.in

भाषा – वैज्ञानिक अध्ययन की यहां दायित्वत नहीं है, वरन् वह ध्वनियों के अध्ययन के माध्यम से कविता के अन्तर्धन की ओर भी इंगित करता है, तथा अर्थ के स्तर पर गौण अर्थ का भी पता लगाता है। कविता की आलोचना का मुख्य धर्म मूल्यों का अन्वेषण है, इसी प्रकार के विचार डोनाल्ड सी फ्रमैन के है –

Recent work in linguists and the increased interest in the linguistic approaches to literary studies have led to the emergence of modern linguistic theory as a contributory discipline to the literary criticism. Linguistics is as much entitled to place in the baggage of the literary critic as history, biography, bibliography or psychology – all disciplines which contribute new fact new ways of looking at facts and new kinds of theoretical commitments to the crafts of studying, explaining and evaluating liters are viewed in this way – as a contributing but not a controlling body of theory – linguistics gives literary criticism a theoretical underpinning as necessary to that undertakings as mathematics to physics. A good critic is perforce a good linguist.

भाषा विज्ञान में जो कार्य इधर हुआ है और जो हो रहा है तथा उसके परिणामस्वरूप साहित्य समीक्षा विषयक जिसक भाषा वैज्ञानिक दृष्टि का उल्लेख हो रहा है, उससे साहित्य समीक्षा के लिये अवदानमूलक एक नई ज्ञानविधा का उदय हो रहा है। कविता की व्याख्या और भाषा विज्ञान की सामर्थ्य को लेकर, एक दूसरे प्रकार का अतिवादी दृष्टिाकोण रखने वाले विद्वानों की मान्यता है कि कविता भाषा का एक रूप है, साहित्य का नहीं। इस दृष्टि से कविता की भाषा स्वयं अपने में साध्य होती है। सोल सपोर्टा, रेब्जिन आदि ऐसे विद्वान हें, जो उक्त धारणा को प्रश्रय देते हैं। सोल सपोर्टा भाषा पर आधारित कला–रूपों के दो विभाग कर देना चाहते हैं।

- साहित्य के सभी रूप
- साहित्येतर कला रूप, यथा संगीत, चित्रकला आदि।
- इस विभाजन के पश्चात वे काव्यभाषा और कला के सम्बन्धों का विवेचन करते हुए तीन स्थितियों की ओर संकेत करते हैं–
- कविता भाषा है, अतः वह भाषा विज्ञान की परिधि के भीतर ही कविता की आलोचना संभव है।
- कविता भाषा न होकर कला का उपांग है, अतः भाषा विज्ञान द्वारा विवेच्य नहीं है।
- कविता भाषा और कला – दोनों क्षेत्रों में सम्बद्ध होने के कारण दोनों के अन्तर्गत विच्छेद है।

उपर्युक्त स्थिति नियन्त्रण के आधार पर कविता को भाषा का ही विशेष रूप मानना समीचीन है। यह उल्लेखनीय है कि सभी कविताएं भाषा के रूप हैं, भाषा के सभी रूप कविताएं नहीं है। भाषा विज्ञान भाषा के सब प्रकार के रूपों का सम्यक अध्ययन करने में पूर्णरूप सक्षमहै। काव्य भाषा, नार्म की तुलना में कहीं बोधक स्वच्छन्द होने के साथ–साथ अपने नार्म की तुलना में अतिरिक्त नियमों का आरोपण करती है। छन्दों और तुर्कों में काव्य भाषा की इस प्रवृत्ति को लक्ष्य किया जा सकता है।

*हार, चीन, कंवुकि वैदक भये, तरनि तिलक भयौ भाल।*

*सेज सिंह, गृह तिमिर वंदरा, सर्प सुमन की माल।।*

हार, चीर, कंवुकि का कंटक होना, माथे के तिलक का सूर्य हो जाना शैया का सिंह होना, तथा फूलों की माला का सर्प बन जाना, नार्म के नियमों के अतिक्रमण के ही उदाहरण है।

कविता को भाषा का ही एक रूप मानने वाले सपोर्टा, इस ओर भी इंशारा करते हैं कि कविता के भाषा रूप के अतिरिक्त और सब त्याज्य है, क्योंकि ''अतिरिक्त'' का अध्ययन भाषा–विज्ञान के द्वारा संभव नहीं हैं, लेकिन इस प्रसंग में यह उल्लेखनीय है कि कविता में भाषा के अतिरिक्त कुछ नहीं होता, तथा जो भी होता है, वह भाषा की असीम क्षमता के अनुरूप होता है। कविता में जो कुछ भी होता है, चाहे अनुमान, चाहे प्रत्यक्ष से – वह सब सामान्य से विचलित भाषा रूप में ढल जाता है। आज भाषा विज्ञान के नवीन जंग – शैली विज्ञान ने उस भार को वहन करने की पूरी योग्यता एवं क्षमता प्राप्त कर ली है। ऐसी स्थिति में यह कहना सहज एवं स्वाभाविक है कि काव्य शास्त्र और शैली विज्ञान के बीच सम्बन्ध एक दूसरे के पूरक है।

## संदर्भ ग्रंथसूची


- शैली विज्ञान आलोचना की नई भूमिका, रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, पृ0 72, 1967
- शैली विज्ञान–आलोचना की नई भूमिका पर आधारित, रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, पृ0 72, 1968
- Linguistic and literary style –"Linguistic approaches to literature Donale C. Freeman, 1970, p. 3.
- Style in language – Ed. Schools – Retrospect's and Prospects from the viewpoint of literary criticism, - Renewellek, p. 410. 1972
- "Literary analysis begins where linguistic analysis stops" Retrospect and prospects from the viewpoint of literary criticism". Renewellek, p. 417, 1965